International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2017; Page No. 25-26

हिंदी कविता में किसान विमर्श

डॉ० चित्रा गोस्वामी

हिंदी विभाग, गोगटे - जोगलेकर महाविद्यालय, रत्नागिरी,

प्रस्तावना

''मैं भारत का किसान हूँ
मैं कागज पर बहुत महान हूँ
मुझे अन्नदाता कहते हैं
हर किताब में मेरा जिक्र है।''

कविता की पंक्तियों मे किसान के मन का आंदोलन दिखाई देता है। ना घर का ना घाट का, ना अमीर ना गरीब, ना भूखा ना पेट भरा ऐसी द्विधा अवस्था में जीनेवाला हमारा किसान। जो ना व्यथा का जिक्र कर सकता है ना सुखसेज पर सो सकता है।

भारत कृषिप्रधान देश है। किसान हमारा राजा है। अधिकांश आबादी कृषि पर निर्भर है और हमारी संस्कृति कृषि समाज से जुड़ी हुई है। साहित्यकार सामाजिक यथार्थ का वर्णन अपने लेखन में करता है। किसान को छोड़कर साहित्य निर्मिति नहीं हो सकती। आज-कल सामान्य से सामान्य किसान की बातें महत्त्वपूर्ण बन गई है। प्रसंगवश किसान जीवन का वर्णन किया जाता है।

आधुनिक साहित्य की पृष्ठभूमि किसान विद्रोह से भरी पड़ी है। इतिहास भी किसानों के शोषण और लूट को व्यक्त करता है। कविता जैसी सशक्त विधा द्वारा कम-से-कम शब्दों में अधिकतम विचार व्यक्त करने का प्रयास किया गया है। किसान के सुख-दुःख, भूखमरी, आत्महत्या, आंदोलन को लेकर कविताएँ बनी है। किसान वर्ग के प्रति असंवेदना दिखाई देती है। किसान कविता का विषय बना लेकिन विमर्श में नहीं लिया गया। यहाँ तक कि प्रकाशकों ने किसान सहित्य की ओर दुर्लक्ष्य किया।

मैथिलिशरण गुप्त का 'किसान' खंडकाव्य उपेक्षित रहा। सुमित्रानंदन पंत की 'कृषक', 'श्रमजीवी' कविताएँ चर्चित नहीं हुई। किसान युग का वाहक है, रुढ़ीयों का रक्षक है, शोषित और क्षुधित भी है। किसान निर्माता है, सहिष्णु है, अभय-चित्त है। सर्वहारा के रुप में कविताओं में किसान मौजूद हुआ। साम्राज्यवादी व्यवस्था में संघर्षरत किसान मौजूद था। लगान देनेवाले किसान पर अत्याचार किया। बालमुकुंद गुप्त ने अपनी कविता में अंग्रेज शासन तथा शोषित किसान का वर्णन किया है। वे कहते हैं -

''जिनके बिगड़े तब जग बिगड़ै उनका हमको रोवा है।
जिनके कारण सब सुख पावें जिनका बोया सब जन खावें,
हाय हाय उनके बालक नित भूखों के मारे चिल्लावें।''

कवि के अनुसार जो उपजाता है वही भूखा है। गेहूं के बदले ज्वार-बाजरा ही नहीं जो वृक्षों की छाल चबाता है। किसी भी मौसम की परवाह न करते हुए, जानवरों से न ड़रते हुए, खुले आकाश के नीचे खेती की जाती है। जिस समय अमीर चैन उड़ाते है, तहखाने सजाते हैं उसी समय लावा-सी जलनेवाली जमीन पर किसान हल चलाता है। धान उपजने पर अधिकारियों के दूर उठा ले जाते हैं, किसान मुँह ताकता रह जाता है। लगान के नाम पर सारा अब्ज हड़प हो जाता है। प्राथमिक जरुरतें भी पूरी नहीं होती ना बैलों को तृण मिल पाता है। कष्ट करनेवालों पर कोठे बरसते हैं, उन्हीं के श्रम का फल खाकर लोग मालामाल हो जाते हैं। प्राकृतिक विपदा से किसान नहीं ड़रता बल्कि पुंजीवादी समाज उन्हें आत्महत्या करने पर मजबूर करता है।

रामधारी सिंह दिनकर ने 'कस्मै देवाय', 'हाहाकार' कविताओं द्वारा किसान के दुःख, तकलिफों का जिक्र किया है। किसानों की गरीबी का शोकगीत है। असन और वसन दोनों का अभाव कृषकों को रोने पर मजबूर करता है।

''जेठ हो कि हो पूस, हमारे कृषकों का आराम नहीं है,
छुटे बैल के संग, कभी जीवन में थाम नहीं है।
मुख में जीभ, शक्ति भुज में, जीवन में सुख का नाम नहीं है,
वसन कहाँ? सूखी रोटी भी मिलती दोनों शाम नहीं है।''

कवि दिनकर के अनुसार धनी लोगों में पशुता दिखती है और कृषक शोषित होकर आँसू पिता है। किसान समाज का पेट पालता है और उसके बच्चे तरसतें है। धरतीमाता भी उसके कष्ट देखती रहती है। जब तक किसान का पसीना धरती पर नहीं गिरता, मोती नहीं उपजता। धरती भो किसान की ही परीक्षा लेती है।

भगवतीचरण वर्मा 'भैंसा गाड़ी' कविता द्वारा किसानों के जीवन का यथार्थ वर्णन करते है। धरती की छाती पर उगे कच्चे घरों को 'फोड़े' की उपमा देते हैं। पैदा होने पर मरने तक को केवल काम का नाम देते है।

किसान को हम एक तो आदर्शवादी 'अन्नदाता' के रुप में देखते हैं या फिर 'बेचारा' आत्महत्या करनेवाला बना देते है। स्वतंत्रता के बाद किसानों का क्रांतिकारी स्वर दिखाई देता है। 'बैल', 'अंगड़ाई', 'किसान', मजदूर की झोंपड़ी', 'बैलगाडी' आदि कविताओं का जिक्र किया जा सकता है। जनकवि शील ने 'भाई का पत्र' कविता में किसानों की दुर्दशा का वर्णन किया है। किसान अपनी जमीन की कमाई से लगान नहीं भर सकता, परिवार नहीं पाल सकता तो अच्छा भविष्य कैसे देगा? कवि कहता है - जिस जमीन से धान उपजता है वही जिंदगी की चिंता बन गई है। परिवार को जिलाने के लिए खर्चा कहाँ से आये? ऐसे हालात में जवानी भी बुढ़ी लगती है। गाँव का किसान कराह रहा है, उसके घर में दीवाली नहीं मनाई जाती है।

नागार्जुन तो क्रांतिकारी कवि है, वे जमीनदारों पर व्यंग्य करते हैं और किसानों का दुखड़ा सुनात हैं। किसान खेती छोड़कर, गाँव छोड़कर शहरों की ओर भाग रहे हैं और जमींदार पशुओं का अधिकार जमा रहे हैं। 'अकाल और उसके बाद' कविता में कवि कहता है -

''कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास
दाने आये घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआं उठा आंगन से ऊफपर कई दिनों के बाद।''

आजादी के बाद भी किसान की स्थिति नहीं बदली। वैश्विकरण, उदारीकरण ने किसान को अधिक खस्ता बना दिया। असमानता की गहरी खायी बन गई। किसानों का विस्थापन हो गया ह। किसान का अस्तित्त्व जमीन से है, जिसे वह बचाना चाहता है लेकिन जागतिकीकरण की दौर ने उसे पंगु बना दिया है। किसान बेबस हो गया है। मिथिलेश श्रीवास्तव 'बित्ताभर' कविताद्वारा किसान की जमीन छिनने की व्यथा को व्यक्त करते हैं।

''उसकी जमीन की बोली लग रहो है
आज वह खड़ा है उसी जमीन की ड़रेर पर।''

बित्ता भर जमीन के लिए लड़ पड़नेवाला किसान-मार खाता है हाथ तुड़वाता है, बैल विकता है और जमीन की बोली लगती है। शायद उसका हृदय चीर जाता है, उसके पिता के सपने बिखर जाते हैं, जमीन से रिश्ता टूट जाता ह।

'किसानों को धीरे-धीरे नष्ट किया गया' कविता द्वारा अच्युतानंद मिश्र कहते हैं - किसान के हाथ में अब कुदाल नहीं रही, उसके बीज सड़ चुके हैं, खेत तो बिक चुका था पर अब सर पर पगड़ी भी नही रही। उसका बेटा साइकिल की दुकान पर काम करता है। आज जो पथ्वी और बाघ बचाओ अभियान करते हैं क्या रे 'किसान बचाओ' आंदोलन करेंगे? जब धरती के भीतर से उग आयेगा किसान का माथा तो सुंघने दिया जायेगा। फसल और मिट्टी की गंध को सुंघा जायेगा। किसान यह प्रजाति नष्ट हो रही है, आगे म्युजियम में सजाई जायेगी।

राकेशधर द्विवेदी 'ग्रामदेवता' कविता में किसान को यह उपमा देते हैं। धरती का वक्षस्थल चीरकर मोती निकाल नेवाला देवता के समान निश्चल, निर्विकार हो गया है।

डॉ. रामकृष्ण सिंगी 'देखा है तुमने....' कविताद्वारा किसानों की आत्महत्याएँ रोकना चाहते हैं। प्रकृति को सुंदरता उसके सामने रखते हैं जिसे केवल किसान ने अनुभव किया है।

'मैं किसा हूँ' कविता में बोरा भरकर धान बेचनेवाला मुठ्ठीभर रुपये पाता है। बैलों को चारे बिना तड़पकर मरते देखता है। कर्ज में डुबकर तील-तील मरता आकाश निहारता है। 'दो बीघा का किसान' कविता में अब किसान की जमीन रुठ गई है, कुआँ सुखा, चुल्हा बुझा, दाना-चारा खत्म हुआ। ऐसी स्थिति में बच्चों की जवानी मृत सी हो गई, पत्नी रोती है, देवताओं को पुजती है। खेतों को जीलाने के लिए प्रार्थना करती है।

राजीव कृष्ण सक्सेनाजी लिखते हैं - बादल संन्यासी बन गये, धरती प्यासी रह गई, फसलें वैरागी हो गई, कुएँ में मकड़ीने जाल लगाए, पनघट पर बैठी बहुरानी साँवरी हो गई। महँगाई से बाजार भर गये और संसद की कुर्सी में खेती और किसानी धँस गई।

किसान रोज मरते हैं लेकिन उसकी परवाह नहीं है। घडियाली आँसू बहाकर नेता ढोंग रचाते हैं और भाषण में हल्ले मचाते हैं। हमारा अन्नदाता सुकून की साँस नहीं ले पा रहा है और सरकारी सिंहासन डोल नही रहा है।

निष्कर्ष

किसान तो इन्सान है लेकिन जानवरों से बदतर स्थिति हो गई है। पेट में भूख और पैरों में छाले लेकर जमीन को बचाना चाहता है। भारत खेती प्रधान देश है। पर आज किसान राजनीति की चर्चा का विमर्श है। कर्ज में डूबा किसान संघर्ष कर रहा है और भारतवर्ष को बचाना चाहता है। इतिहास किसान की गाथा गाता है, भूगोल जमीन का नक्शा सीखाता है - पर वर्तमान म पेट-पीठ एक, फटे वस्त्र, जले पाँव, बिखरे परिवारवाले किसान की ओर देखने के लिए समय नहीं है। किसान कोई विमर्श का विषय नहीं, बल्कि जिंदादिल आदमी है जो भारतमाता का सुपूत्र और राष्ट्र का राजा है।

संदर्भ सूचीं

1. रामधारी सिंह दिनकर – कस्मै देवाय , हाहाकार।
2. भगवती चरण वर्मा – भैंसा गाडी।
3. नागार्जुन – आकाल और उसके बाद।
4. मिथिलेश श्रीवास्तव – बित्ताभर।
5. अच्युतानंद मिश्र – किसानों को धीरे–धीरे नष्ठ किया गया।
6. राकेशधर द्विवेदी – ग्रामदेवता।
7. डॉ. राधाकृष्ण सिंगी – देखा है तुमने।